गुरु द्रोणाचार्य

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्
तिरुपति

श्रीनिवास बालभारती - 108

गुरु द्रोणाचार्य

तेलुगु मूल
डा. के.एस. राममूर्ति

अनुवाद
प्रो. यद्दनपूडि वेंकटरमण राव

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्
तिरुपति
2013

Srinivasa Bala Bharati - 108
(Children Series)

GURU DHRONACHARYA

Telugu Version
Dr. K.S. Ramamurthy

Translator
Prof. Yadanapudi Venkata Ramana Rao

Editor-in-Chief
Prof. Ravva Sri Hari

T.T.D. Religious Publications Series No.963
©All Rights Reserved

First Edition - 2013

Copies:

Price :

Published by
L.V. Subrahmanyam, I.A.S.,
Executive Officer
Tirumala Tirupati Devasthanams
Tirupati.

Printed at
Tirumala Tirupati Devasthanams Press
Tirupati.

दो शब्द

नन्हें बच्चों के मन शीतल और स्वच्छ होते हैं। सही रास्ते पर सही पद्धति से संस्करित बच्चे ही भविष्य में भारत के सभ्य नागरिक बनते हैं। संस्कार युक्त भावों को अपनाकर अपने परिवार और अपने देश का नाम ऊँचा करते हैं। सब की प्रतिष्ठा बढ़ाकर उज्ज्वल बनते हैं। हमारे पुराणों के महापुरुष, महान पतिव्रताएँ आदि कैसे रहे थे? वे ऐसे कैसे बने?- इसका समग्र बोध बच्चों को मिलना चाहिए। उनकी गाथाएँ, कहानियाँ, महिमाएँ आदि उन तक पहुँचा सकें तो बच्चों को सही संस्कार मिलेंगे। प्रभाव नन्हें मनों पर संस्कारों की छाप डालेंगे। बच्चों के भविष्य के लिए मार्गदर्शक एवं उपयोगी सिद्ध होंगे।

उक्त उद्देश्य के अनुरूप ही ''श्रीनिवास बाल भारती'' शीर्षक पुस्तिका माला का प्रकाशन तिरुमल - तिरुपति देवस्थानम् कर रहा है। इस में भारत के अनेक प्रसिद्ध आदर्श व्यक्तित्वों और महात्माओं के परिचय हैं। छोटे - छोटे सरल वाक्यों में आकर्षक कथा कथन पद्धति में प्रस्तुत करने के प्रयास भी हैं। आशा है कि छोटे बच्चे इन्हें अवश्य पसंद करेंगे।

ऐसी योजना की परिकल्पना कर, पुस्तिकाओं के रूप में तैयार कराकर, सही रूप में प्रस्तुत कराने का श्रेय स्वर्गीय डॉ.यस.बी. रघुनाथाचार्य जी को मिलता है। वे हम सब के अभिनंदन के पात्र हैं। इस योजना में सहायता पहुँचानेवाले तेलुगु मूल के लेखक, हिन्दी में रूपांतरित करनेवाले रचइताओं तथा कलाकारों को धन्यवाद।

इन पुस्तिकाओं को बच्चे और बडे सब समादृत करेंगे, यही हमारी आशा है।

कार्यकारी अधिकारी
तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्, तिरुपति

प्राक्कथन

आज के बच्चे कल के नागरिक हैं। अगर वे बचपन में ही महोन्नत सज्ञनों की जीवनियों के बारे में जानकारी लें, तो अपने भावी जीवन को उदात्त धरातल पर उज्ञवल रूप से जीने के मौके को प्राप्त कर सकते हैं। उन महोन्नत सज्ञनों के जीवन में घटित अनुभवों से हमारी भारतीय संस्कृति, जीवन में आचरणीय मूल धार्मिक सिद्धान्तों तथा नैतिक मूल्यों आदि को वे निश्चय ही सीख सकते हैं। आज की पाठशालाओं में इन विषयों को सिखाने की संभावना नहीं है।

उपरोक्त विषयों को ध्यान में रखकर तिरुमल तिरुपति देवस्थान के प्रचुरण विभाग ने डॉ.एस.वी.रघुनाथाचार्य के संपादन में स्थापित ''बाल भारती सीरीस'' के अन्तर्गत विविध लेखकों के द्वारा तेलुगु में रचित ऋषि-मुनियों व महोन्नत सज्ञनों की जीवनियों से संबंधित लगभग १०० पुस्तिकाओं का प्रकाशन किया। इनका पाठकों ने समादर किया और इसी प्रोत्साहन से प्रेरित होकर अन्य भाषाओं में भी इन पुस्तिकाओं के प्रकाशन करने का निर्णय लिया गया। प्रारम्भिक तौर पर इनको अंग्रेजी व हिन्दी भाषाओं में प्रकाशित किया जा रहा है। इनके द्वारा बच्चे व जिज्ञासु पाठकों को अवश्य ही लाभ पहुँचेगा।

इन पुस्तिकाओं के प्रकाशन करने का उद्धेश्य यही है कि बच्चे पढें और बडे लोग इनका अध्ययन कर, कहानियों के रूप में इनका वर्णन करें, तद्वारा बच्चों में सृजनात्मक शक्ति को बढा दें। फल स्वरूप बच्चों को अच्छे मार्ग पर चलने की प्रेरणा निश्चय ही बचपन में ही मिलेगी।

आर. श्रीहरि
एडिटर-इन-चीफ
ति.ति.देवस्थानम्

प्राक्कथन

आज के बच्चे ही कल के समाज के आधार हैं। इसीलिए उनको सही नागरिक बनाने का दायित्व और कर्तव्य हर माता-पिता एवं समाज का बनता है। पौधे को ही नहीं सम्हालेंगे तो पेड़ कैसे ठीक बढ़ेगा? बचपन से ही सही आचरण, सदाचार, सच्छीलता जैसे गुणों की ओर बच्चों को जागरूकता से उन्मुख कराकर बढ़ाना होगा। तभी वे कर्तव्यपरायण और दायित्वनिर्वाहक नागरिकों के रूप में रूपाइत होते हैं। ऐसे व्यक्ति ही एक ओर अपने परिवार की उन्नति की दिशा में लगते हुए साथ साथ दूसरी ओर समाज के कल्याण के लिए भी कार्यरत होते हैं। परिणामतः भारत का औन्नत्य भी दुगुना होगा।

बच्चों को, लडकी और लडकों को, ध्यान में रखकर उन्हें आध्यात्मिकता से युक्त सभ्य नागरिकों के रूप में, गुणवानों के रूप में, सुशीलों के रूप में तरासने के उद्देश्य से ही तिरुमल - तिरुपति देवस्थानम्, तिरुपति, ने ''श्रीनिवास बाल भारती'' शीर्षक से अच्छी पुस्तकों को उनके हाथ में पहुँचाने की इच्छा से आदर्श पुरुषों, महनीय व्यक्तियों, महायोगियों, पतिव्रता नारियों आदि के दिव्य चरितों को बच्चों की समझमें आनेवाली सरल भाषा में, सुबोध शैली में लिखवाकर देने का अविरल कार्य हाथों में लिया है। ''श्रीनिवास बाल भारती'' शीर्षक देकर एक योजना की परिकल्पना की है। प्रसिद्ध लेखकों और आचार्यों से वृत्त लिखवाकर छोटी - छोटी पुस्तिकाओं के रूप में छपवाकर बच्चों तक पहुँचाया जा रहा है।

प्रथमशः यह तेलुगु भाषा में संपन्न किया गया और नयी पुस्तिकाएँ प्रकाशित करने के प्रयास भी जारी हैं। अब उन्हीं पुस्तिकाओं को हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं में विद्वानों द्वारा अनुवाद कराकर समस्त देश में बच्चों तक पहुँचाने का प्रयास आरंभ हो गया है। इसी प्रयास का फल यह पुस्तिका है।

बच्चों को और बच्चों केमाता - पिताओं को यह एक महत् दिशा देने वाला सिध्द होगा। तिरुमल - तिरुपति देवस्थानम् अत्यंत श्रध्दा से इन पुस्तकों को प्रकाशित कर रहा है। बडे लोग भी पढ़ें! अपने बच्चों से पढ़वायें! लाभ उठायें! बच्चों के सुनहले भविष्य केलिए सुदृढ़ रास्तों का निर्माण करें! यही हमारी आशा - आकांक्षा है।

अध्यक्ष
तिरुमल - तिरुपति देवस्थानम् शासक मंडली
तिरुपति।

एक बात और

बच्चों में धार्मिक भावना और धर्म का ज्ञान बढ़ाना उनके लिए जीवन भर उपयोगी सिद्ध होगा। इसी उद्देश्य की पुर्ति की दिशा में तिरुमल - तिरुपति देवस्थानम् ने ''श्रीनिवास बाल भारती'' योजना बनायी है। इस योजना केप्रथम प्रधान संपादक मान्यवर डॉ.यस.बी. रघुनाथाचार्युलु थे। आप तिरुपति के संस्कृत विद्यापीठ के उपकुलपति भी रहे थे। उन्होंने विद्वानों द्वारा पुस्तकें तैयार कराकर उनको संपादितकर हजारों प्रतियाँ तेलुगु प्रांत के बच्चों तक पहुँचायी हैं।

भारतीय इतिहास ग्रंथों और पुराणों के महापुरुषों, महान पतिव्रता स्त्रियों, संस्कृति के संरक्षकों आदि की जीवन गाथाओं को सरल - सुन्दर शैली में लिखवाकर प्रकाश में लाया गया। प्रांत की पाठशालाओं में इनको पहुँचाकर भविष्य भारत के नागरिकों को संस्कारी बनाने का यह एक प्रयास है। धार्मिक साहित्य का परिचय बच्चों को देने की दिशा में तिरुमल - तिरुपति देवस्थानम् का यह प्रथम प्रयास तेलुगु भाषा के माध्यम से संपन्न हुआ है।

प्रयत्न किसी भी प्रकार का हो बड़ों द्वारा ही संपन्न होना चाहिए। घर में माता - पिता अपने बच्चों के प्रथम गुरु होते हैं। इसीलिए वे ही पहले ''श्रीनिवास बाल भारती'' को समादृत करें। इस की सूचना बच्चों को दें। उन्हें पढ़ने केलिए प्रवृत्त करें। तभी बच्चों को आदर्श नागरिक के रूप में अन्तरित करने में वे सफल होंगे। इस में किसी भी तरह की शंका नहीं होनी चाहिए। बच्चों में

नैतिक मूल्य, आध्यात्मक चिंतन आदि के विकास की दिशा में बड़े प्रयत्नशील होते है तो बच्चों का भविष्य भी उज्ज्वल होगा। इस प्रकार के संकल्प में सहायक ''श्रीनिवास बाल भारती'' की पुस्तिकाएँ हैं। अब यें हिन्दी में उपलब्ध हैं। इनका लाभ सभी उठायेंगे - यही कामना है।

- **प्रधान संपादक**

गुरु द्रोणाचार्य

द्रोणाचार्य कुरुकुल गुरु और कुरुक्षेत्र संग्राम के वयोवृध्दों में प्रमुख हैं। ये भरद्वाज मुनि के पुत्र हैं। भरद्वाज मुनि द्वारा ''द्रोणम्'' (एक विशेष प्रकार का पात्र) में परवरिश किये जाने के कारण ही इन्हें द्रोण नाम दिया गया। कुरुवंशियों के गुरु होने के कारण द्रोणाचार्य नाम से प्रसिद्ध हुए।

द्रोण और द्रुपद की शिक्षा

पुण्यमूर्ति भरद्वाज मुनि के मित्र थे पृषत्। वे पांचाल देश के राजा थे। एक समय जब राजा तपस्यारत थे, तो पास के पौधों से पुष्प चयन करती हुई मेनका पर उनकी दृष्टि पड़ी। तुरंत रेतः स्कलन हुआ। उससे एक बालक का जन्म हो गया। वही द्रुपद है। द्रुपद का ही एक और नाम यज्ञसेन है। पृषत ने बालक द्रुपद को घर न ले जाकर अपने मित्र भरद्वाज मुनि को सौंपा। उन्हीं के यहाँ शिक्षा - दीक्षा हुई। भरद्वाज ने अपने पुत्र द्रोण और मित्र पृषत् के पुत्र द्रुपद दोनों को समान रूप से देखा। वेद विद्याओं के साथ धनुर्विद्या की भी शिक्षा दी। कालांतर में पृषत केबाद द्रुपद पांचाल देश के राजा बने। पांचाल जाते समय द्रुपद ने अपने मित्र द्रोण को भी साथ चलने का निमंत्रण दिया। पर द्रोण उनके साथ नहीं चले।

अश्वत्थामा का जन्म

द्रुपद के जाने के बाद द्रोण ने पुनः अग्निवेश महामुनि के शिष्य बने। उनके पास धनुर्विद्या का अभ्यास किया। उनकी कृपा से द्रोण ने

आग्नेयास्त्र आदि दिव्यास्त्रों की शिक्षा पायी। शिक्षा समय परिसमाप्त हो गया। पिता भरद्वाज ने द्रोण को विवाह सूत्र में बन्धने का आदेश दिया। पिता के आदेशानुसार द्रोण कृपाचार्य की छोटी बहन कृपि से विवाह किया। उस दंपति की संतान हैं अश्वत्थामा।

इन दोनों में से क्या चाहिए

द्रोण गरीब थे। परिवार का पालन-पोषण उनके लिए भार हो गया था। कुछ धन पाना चाहा। सुना था कि जमदग्नि के पुत्र परशुराम ब्राह्मणों को निरंतर धन दान करते हैं। आशा लेकर द्रोण महेन्द्र पर्वत शिखर पर तपस्या में रत परशुराम के पास पहुँचे। सच्चरित्रवान परशुराम ने अपने पास आये द्रोण से आने का कारण पूछा। द्रोण ने कारण बताया और कुछ धन देने की प्रार्थना की। द्रोण की प्रार्थना सुनकर परशुराम व्यथित हुए। क्योंकि द्रोण के उनके पास पहुँचने के कुछ ही समय पहले परशुराम ने अपने पास बचे पूरे धन को ब्राह्मणों में बाँट दिया था। जो भी कृषि कार्य हेतु भूमि उनके पास थी उसे भी कश्यप महामुनि को दान में दे दी थी। अब उनके पास मात्र अपना शरीर और अपनी धनुर्विद्या ही रह गये। परशुराम ने इन दोनों में से एक को चुनने की बात द्रोण के सामने रखी। द्रोण ने धनुर्विद्या सिखाने की चाह सामने रखी। धनुर्विद्या में असमान प्रतिभा संपन्न परशुराम ने अपनी विद्या संपूर्ण रूप से द्रोण को सिखाई। अनके दिव्यास्त्रों का प्रयोग और उनसे संबन्धित मंत्रों का आकलन पाये द्रोणने अपनी शिक्षा को समग्र रूप से संपन्न कर भविष्य की ओर कदम बढ़ाये।

अहं पर चोट लगी

परशुराम के पास रहकर अस्त्रविद्याओं में पारंगत होने के पश्चात् द्रोण अपने सहपाठी बाल्य मित्र द्रुपद के पास सहायता की आशा लेकर गये। द्रुपद पांचल देश का राजा बनकर समस्त वैभवों

और ऐश्वर्यों में मस्त थे। द्रोण दारिद्र्य की पराकाष्ठा से गुजर रहे थे। द्रुपद को द्रोण ने अपने बाल्य स्नेह की याद दिलायी। परन्तु द्रुपद ने उनकी ओर ध्यान ही नहीं दिया। इतना ही नहीं, उन्होंने द्रोण से कहा- ''हम महाराजा हैं। तुम दरिद्र ब्राह्मण हो। हमारा और तुम्हारा संबन्ध कैसे जुडेगा। तुम से स्नेह हमारे लिए असंभव है।'' द्रोण नाराज हो गये। परन्तु तब विवश थे। अपने को संभालकर अपमान को अन्तरंग में छिपाकर विकलित मन और विचलित हृदय से हस्तिनापुर की ओर चले- पत्नी और पुत्र के साथ।

गेन्द कुए में गिरी थी

हस्तिनापुर के पास एक विशाल खेल का मैदान था। उस मैदान में हस्तिनापुर के राजकुमार खेलते हैं। उस दिन कौरव-पांडव गेन्द से खेल रहे थे। बच्चे जोश से खेल में मस्त थे। सुनहले रंग की गेन्द थी। मैदान में पास ही स्थित एक कुए में जाकर गिरी। राजकुमारों के पास उसे निकालने का कोई उपाय नहीं था। कोई साधन भी नहीं था। कुए में गिरी गेन्द की ओर ताकते हुए राजकुमार कुए के पास खडे थे।

मैं निकालकर दूँगा

उसी समय द्रुपद से अपमानित द्रोण वहाँ पहुँचे। राजकुमारों से बात की। विषय का बोध उन्हें हो गया। गौतम मुनि के पास रहकर तब तक राजकुमारों ने शास्त्र विद्याएँ सीखी थीं। उनको गेन्द निकालने का कोई उपाय नहीं सूझा था। द्रोण ने राजकुमारों के पास जाकर कहा- ''मैं निकालकर दूँगा''। राजकुमारों का कुतूहल बढ़ा। द्रोण ने पहले एक बाण गेन्द पर छोडा। वह बिना गेन्द को नुकसान

किये उस पर चुभ गयी। फिर एक के बाद एक बाण का प्रयोग करते हुए बाणों की लडी बनायी। जब ऊपर का बाण हाथ की पहुँच में आ गया तो द्रोण ने गेन्द को कुए से जागरूकता से निकाल कर राजकुमारों को दिया। राजपुत्र आश्चर्य चकित हो गये। द्रोण को लेकर पितामह भीष्माचार्य के पास गये। उनका परिचय दिया। बात समझायी।

आप क्या करना चाहते हैं?

पितामह भीष्म बहुत समय से राजकुमारों के लिए उपयुक्त और योग्य गुरु की तलाश में थे। द्रोण तेजस्वी, ओजस्वी और बलशाली लगे। सद्गुणों से संपन्न द्रोण की शक्ति और कुशलता को अपने पौत्रों से सुनकर उन्हें अत्यंत आनंद हुआ। उन्होंने समुचित सम्मान देकर पूछा- ''स्वामी! आप कहाँ से आ रहे हैं? कहाँ रहना चाहते हैं? क्या करना चाहते हैं?''

मन चाही लता पैरों से लिपटी

द्रोण ने विनम्रता से कहा- ''आर्य! मैं भरद्वाज का पुत्र हूँ। अग्निवेश महामुनि के आश्रम में रहकर मैं ने ब्रह्मचर्याश्रम व्यतीत किया है। उनसे निष्ठापूर्वक वेदाध्ययन और धनुर्वेद का अभ्यास पाया। पांचाल देश के राजा पृषत का पुत्र द्रुपद मेरा सहाध्यायी था। पिता जी के आदेश के अनुसार मैंने कृपि से विवाह किया है। यह तेजस्वी मेरा पुत्र अश्वत्थामा है। मैं दरिद्रता से पीडित हूँ। परन्तु राजाओं के पास जाकर दान माँगने की इच्छा मुझ में अब नहीं रह गयी। परन्तु मेरा पुत्र अभी नन्हा है। राजकुमारों को दूध पीते देख उसके मन में भी दूध पीने की चाह जगी तो मैं अपने बचपन के

दोस्त दुपद की याद की। गुरुकुल से जाकर वह राज सिंहासन पर बैठा है। पहले उसने मुझे अपने साथ चलने के लिए कहा था। लेकिन जब मैं अपनी दरिद्रता ले उसके पास पहुँचा तो उसने राज्याधिकार के गर्व से युक्त होकर मेरा तिरस्कार किया। समस्त वैभवों में झूमनेवाले उसके साथ मेरी मित्रता कैसे जुड सक्ती है? यही बात उसने मुझसे कही। अपमान तो मैं सहन नहीं कर सका। पर विवश हो मैं वहाँ से निकल पड़ा। चलते-चलते आपकी क्षेत्र-सीमा में पहुँचा हूँ। जो यहाँ घटा आप जानते हैं।''

आप बीती सब द्रोण ने भीष्माचार्य के सामने रखी। सुनकर पहले भीष्म को दुःख अवश्य हुआ। सोचा तो उनको लगा कि ''जिस लता को ढूँढने मैं चला वही मेरे पैरों से लिपट गयी है''। द्रोण का सम्मान किया। पूजादि विधियों से द्रोण का सत्कार कराया। धनादि से उन्हें संपन्न किया। द्रोण का मन आनंद से भर गया।

तब जाकर भीष्म पितामह ने पांडव और कौरव राजकुमारों को द्रोण को सौंप कर उनसे प्रार्थना की- ''हे आचार्य! आज से आप इन राजकुमारों के गुरु होंगे। इन्हें अपनी समस्त विद्याएँ सिखाइयेगा।'' भीष्म की कामना द्रोण की इच्छा बनी। द्रोण मान गये। कौरवों और पांडवों को धनुर्विद्याएँ सिखाने का भार वहन किया। तभी से द्रोण द्रोणाचार्य बने।

मेरी इच्छा की पूर्ति करनेवाला कौन है?

शिक्षा-समाप्ति के बाद एक दिन द्रोणाचार्य ने अपने शिष्य राजकुमारों को बुलाकर कहा- ''आप लोगों की शिक्षा समाप्त हुई है।

परन्तु आप लोगों में से कौन मेरी इच्छा को संपन्न करनेवाला है?'' धृतराष्ट्र के पुत्र एक दूसरे के मुँह ताकते ही रह गये। किसी ने कुछ कहा नहीं। तब तक पाँडुसुत अर्जुन सामने आये और बोले- ''गुरुवर! मैं आपकी आज्ञा लेने लिए उत्सुक हूँ। बताइयेगा, आपकी इच्छा क्या है?'' गुरु के मन में आनंद का संचार होने लगा। अर्जुन को बाहों में लिये। अत्यंत प्रीति से अर्जुन को धनुर्विद्या के विशेष अंशों का बोध कराने लगे। सभी कुरुपुत्रों ने धनुर्विद्या सीखी, परन्तु राधा पुत्र कर्ण के भाग्य में यह नहीं रहा। तभी से सूतपुत्र कर्ण के मन में अर्जुन की धनुर्विद्या कुशलता पर ईर्ष्या जगी। इसी ने कर्ण को दुर्योधन की ओर आकर्षित भी किया था। कर्ण दुर्योधन का पक्षपाती बन गया।

अनुपम धनुर्विद्या प्रवीण

अनवरत अस्त्र-शस्त्राभ्यास से अर्जुन कुशल धनुर्धारी बने। विद्या के साथ साथ विनय संपन्न भी हुए। अर्जुन की कुशलता और बुद्धि की तीव्रता को पहचान कर गुरु द्रोणाचार्य के मन में उनके प्रति वात्सल्य बढ़ा। उससे अश्वत्थामा के मन में भी ईर्ष्या का बीज पनपने लगा। अर्जुन को अंधेरे में भोजन न देने की आज्ञा अश्वत्थामा ने दी।

एक दिन जब अर्जुन रात का भोजन ले रहे थे, तो तेज हवा चली। दीप बुझ गया। अंधकार में ही अर्जुन भोजन लेने लगे। साथ साथ उन्हों ने सोचा ''अभ्यास के कारण अंधकार में भोजन करना सुलभ हुआ। अगर काम कोई भी हो अभ्यास से सुलभ साध्य बन सकता है।'' फिर अर्जुन अंधेरे में धनुर्विद्या का अभ्यास करने लगे। एक दिन धनुष की नारी टंकार से आचार्य की नींद खुली। देखा कि

अर्जुन अंधेरे में साधना कर रहे हैं। आचार्य ने अर्जुन की विद्यासक्ति की सराहना की। वादा किया कि उन्हें वे धनुर्धारियों में असमान बनाएँगें। बस, अर्जुन द्वन्द्व युद्ध, संकीर्ण युद्ध, रथ पर से युद्ध, पृथ्वी पर से युद्ध, अश्वारूढ हो युद्ध, वारण युद्ध आदि समस्त युद्ध विद्याओं में गुरु से शिक्षा ली। अनेक व्यूह रचनाएँ सीखीं। प्रतिव्यूह रचना और छेदन सूत्र समझे। अस्त्र प्रयोग रहस्यों से अवगत हुए। इस सब से अर्जुन असमान बने। यह गुरु का कटाक्ष ही था।

गुरु के स्थान पर गुरु की प्रतिमा

अनेक प्रकार के युद्ध विद्या सूत्रों को सिखानेवाले गुरु द्रोणाचार्य की कीर्ति चारों ओर फैली। द्रोणाचार्य की असमान प्रतिभा से आकृष्ट होकर एक दिन हिरण्यधन्वा नामक निषाद राजा का पुत्र द्रोणाचार्य के पास आया। अपने को शिष्य बनाने की प्रार्थना की। लेकिन निषाद जाति के होने के कारण द्रोणाचार्य ने उसे स्वीकारा नहीं। वह निषाद पुत्र ही एकलव्य था। घर लौटा। आचार्य द्रोण की प्रतिमा की प्रतिष्ठा कर ली। रोज उस प्रतिमा की पूजा-अर्चना करता और धनुर्विद्या का अभ्यास करने लगता। धीरे धीरे विद्या उस में विकसित होने लगी और सभी रहस्य भी अवगत होने लगे।

इतना कुशल व्यक्ति कौन?

इधर हस्तिनापुर में राजकुमारों की शिक्षा-दीक्षा अनवरत चल रही थी। एक दिन सभी राजकुमार आखेट की इच्छा से जंगल में गये। वहाँ राजकुमारों के साथ चलनेवाले एक सैनिक का कुत्ता कुछ भटक कर उस स्थान पर पहुँचा जहाँ एकलव्य धनुर्विद्याभ्यास कर

रहा था। वहाँ पहुँचकर कुत्ता भौंकने लगा। अपने ध्यान को भंग करनेवाले कुत्ते के मुँह में एकलव्य नें एक साथ सात बाण छोडे। बाणों से कुत्ते का मुँह बन्ध हो गया। लेकिन आहत नहीं हुआ। वह दौड़कर राजकुमारों के पास पहुँचा। उसे देखकर राजकुमार आश्चर्य चकित हो गये। 'इतना कुशल धनुर्धारी कौन हैं?'- देखने के लिए आगे बढे। मिले एकलव्य! काला रंग, कृष्णाजिन धारण, प्रकाशमान बाण!! जिज्ञासा से पूछा गया तो एकलव्य से राजकुमारों को उत्तर मिला- ''मैं हिरण्यधन्वा नामक निषाद राजा का पुत्र हूँ। मेरा नाम एकलव्य है। मैं गुरु द्रोणाचार्य का शिष्य हूँ।'' लौटकर राजकुमारों ने द्रोणाचार्य से बात कही।

एकलव्य की गुरु दक्षिणा

उक्त घटना से अर्जुन का मन दुःखी हुआ। तब अर्जुन ने गुरु के पास जाकर एकलव्य की असमान विद्याकौशल की बात उठाकर अपने संबन्ध में आचार्य की प्रतिज्ञा की याद दिलायी। सुनकर द्रोणाचार्य अर्जुन के साथ एकलव्य के पास पहुँचे। आचार्य के आगमन से एकलव्य को अत्यंत संतोष हुआ। अपने विद्यार्जन की पद्धति को सविवरण बताया। गुरु के बल से उसने कैसे कौशल प्राप्त किया, इसकी सूचना दी। सब सुनकर द्रोणाचार्य ने गुरु दक्षिणा माँगी। एकलव्य ने तुरंत अपना शरीर, धन, परिजन इन तीनों में से किसी को भी चुनने की बात आचार्य के सामने रखी। वादा किया कि जो वे चाहेंगे, उसे वह देगा। द्रोणाचार्य ने कुछ सोचा। अन्त में उन्होंने एकलव्य से उसके दक्षिण हस्त का अंगूठा माँगा। बिना सोचे तुरंत एकलव्य ने अंगूठा काटकर गुरु के चरणों में अर्पित

किया। द्रोण उसे स्वीकार कर हस्तिनापुर लौटे। उधर एकलव्य का धनुर्विद्याभ्यास ठप हो गया। इधर अर्जुन के मन की व्यथा शमित हुई।

और कुछ दिखाई नहीं देता है

शस्त्रास्त्र विद्याओं की शिक्षा में रत कुंभसंभव द्रोण ने एक दिन राजकुमारों की निपुणता की परीक्षा लेनी चाही। इस के लिए एक पेड की डाली पर एक सुनहले रंग के तोते की पुतली रखकर राजकुमारों को बुलाकर परीक्षा की बात कही। परीक्षा अलग अलग लेने की भी अपनी इच्छा व्यक्त की। सभी ने इसे स्वीकारा। द्रोणाचार्य ने प्रथमतः युधिष्ठिर को बुलाकर कहा- ''हे धर्मतनय! वृक्ष के अग्र भाग में जो पक्षी है उसे तुम देख रहे हो?''

''हाँ''- युधिष्ठिर का जवाब था

''क्या तुम्हें अपने अनुज भी दिखाई दे रहे हैं?''

''हाँ''

तब द्रोण ने कहा- ''तुम्हारा ध्यान भटका हुआ है। एकाग्रता कम है। अब तुम पक्षी को बाण से मार नहीं सकते हो।'' धर्मराज को भेज दिया। इसी प्रकार तरह तरह के प्रश्नों से सभी राजकुमारों की परीक्षा ली। सभी में एकाग्रता की कमी किसी न किसी हद तक पायी। अन्त में उन्होंने अर्जुन को बुलाया। अर्जुन ने स्पष्टतः कहा कि ''गुरुजी! मुझे लक्षित पक्षी की आँख के सिवा और कुछ नहीं दिखाई दे रहा है।'' गुरु ने बाण छोडने के लिए कहा। पक्षी नीचे गिरा।

अर्जुन की कुशलता और एकाग्रता पर द्रोणाचार्य को संतोष हुआ। उन्हें अपनी सारी विद्याएँ प्रदान करने का निश्चय कर लिया।

यही योग्य है

परीक्षा से संबन्धित उक्त घटना के बाद एक दिन द्रोण राजकुमारों को लेकर गंगा स्नान के लिए निकले। वहा निष्ठा से ध्यान में लीन द्रोण की जंघा को एक मगर ने ग्रसा। वह पानी में स्पष्ट दिखाई भी नहीं दे रहा था। उससे मुक्त होने की सामर्थ्य रखते हुए भी द्रोण ने अपने शिष्यों से उस मगर को मारने के लिए कहा। दुर्योधन ने अपनी अशक्तता व्यक्त की। लेकिन अर्जुन ने हार नहीं मानी। पाँच बाण छोडे। मगर का अन्त हो गया। इस घटना से द्रोण को अर्जुन पर अतुलित विश्वास हो गया। राजा द्रुपद से बदला लेने का निर्णय भी लिया।

राजकुमारों का अस्त्रविद्या प्रदर्शन

कुछ ही समय बाद राजकुमारों की अस्त्रविद्या से संबन्धित एक प्रदर्शन का आयोजन किया गया। इसे देखने देश की चारों ओर से लोग आये। दरबारी सदस्य निर्देशित स्थानों पर विराजमान हुए। सभी राजकुमार एक के बाद एक अपने गुरु की अनुमति से अपनी अपनी अर्जित विद्या का कौशल दिखा रहे थे। भीम और दुर्योधन की बारी आयी। दोनों के बीच सहज विरोधी भाव जगा। भावनाएँ बढ़ीं। द्रोण ने देखा। पुत्र अश्वत्थामा को भेजकर भीम और दुर्योधन के बीच की प्रतिद्वन्द्विता रुकवायी। फिर अर्जुन की बारी। गुरु की अनुमति हुई।

अर्जुन पर कर्ण का सवाल

अर्जुन ने आचार्य की अनुमति से अपनी विद्याओं का कुशल प्रदर्शन किया। सब उनकी प्रशंसा करने लगे। उस समय मंच पर कर्ण ने प्रवेश किया। अपने को भी अस्त्र विद्या कौशल-प्रदर्शन की अनुमति माँगी। वह अर्जुन पर ही सवाल था। पार्थ भी आचार्य की अनुमति से विद्या प्रतिद्वन्द्वता के लिए तैयार हो गया था। परन्तु आचार्य ने उसे शास्त्र विरुद्ध घोषित किया। कर्ण से कहा कि ''तुम अपना आभिजात्य बताओ।'' कर्ण का सिर झुका। वह सूत पुत्र था। समय की आवश्यकता को देखकर दुर्योधन ने कर्ण को अंग राज्य का राजा घोषित किया। अस्त्र विद्या प्रदर्शिनी में भाग लेने के लिए व्यक्ति को क्षत्रिय होना चाहिए अथवा कम से कम राजा। अवश्यकता की पूर्ति दुर्योधन ने की। पर बड़ों द्वारा विद्या प्रदर्शन की समाप्ति घोषित हो गयी। समय की मांग वही थी।

द्रुपद को बंदी बनाकर लाइए

एक दिन प्रातः द्रोण ने अपने शिष्यों को बुलाकर कहा- ''हे राजकुमार! आप लोगों की शिक्षा संपन्न हुई। अब गुरु दक्षिण देने का समय आ गया है।'' शिष्यों ने आदरपूर्वक गुरु से कहा- ''हे गुरुदेव! आप की इच्छा बताइएगा?'' जवाब में द्रोणाचार्य ने शिष्यों के सामने प्रस्ताव रखा- ''ऐश्वर्य से घमंडी होकर द्रुपद ने मेरा अपमान किया है। उसे बंदी बनाकर मेरे सामने लाइये। यही मेरे लिए गुरु दक्षिणा होगी।'' मानकर सभी पांचाल देश की ओर चले। कौरवों की इच्छा थी कि वे इस में आगे रहे। रास्ते में अर्जुन ने द्रोणाचार्य से कहा-

''गुरुजी, कौरव सब अत्युत्साह के साथ द्रुपद को पकडने जा रहे हैं। किन्तु आप जानते हैं कि द्रुपद आसानी से पकड़ में आनेवाले नहीं हैं। वे तो आपके सहपाठी हैं। अगर कौरव खाली लौट आते हैं तो क्या मैं आप की इच्छा की पूर्ति के लिए आगे बढ़ सकता हूँ।'' गुरु ने मुस्कुराते हुए अपनी स्वीकृति दी।

क्या आप मुझे पहचानते हैं?

कौरवों ने पांचाल देश पर धावा बोल दिया। शक्ति भर प्रयत्न किया। प्रचंड युध्द हुआ। लेकिन द्रुपद के सामने वे ठहर नहीं पाये। फिर अर्जुन गुरु द्रोणाचार्य और भ्राता युधिष्ठिर की अनुमति लेकर नकुल-सहदेव के साथ द्रुपद से युध्द केलिए निकले। द्रुपद और अर्जुन के बीच घमासान युध्द हुआ। परस्पर द्वन्द्व युध्द भी हुआ। द्रुपद ने अर्जुन का धनुर्भंग करने के उद्देश्य शर प्रयोग किया। तब अर्जुन तलवार लेकर द्रुपद पर कूद पडे। उन्हें पकडकर अपने रथ के कंभे से बाँधा। सीधे द्रोणाचार्य के चरणों के पास गिराया। द्रोणाचार्य ने द्रुपद से तब कहा- ''आप कौन हैं? आहो!- - - आप राजा द्रुपद ही हैं न? इतने असमर्थ! किसी की सहायता न करनेवाले आप इतने असहाय कैसे हो गये!? क्या आपके राज्याधिकार के अंहकार से अभी मुक्त नहीं हुए?'' अवहेलना से भरे ताने कसकर ही द्रोण ने द्रुपद को छोडा।

अनोखी गुरु दक्षिणा

द्रोणाचार्य द्रुपद को पांचाल राज्य में आधा हिस्सा देकर बाकी अर्ध राज्य को अपने अधीन रखा। सर्प छत्रधारी हो कर राज्य

चलाने लगे। अर्जुन के द्वारा अपनी कामना संपन्न कराकर द्रोण अति प्रसन्न हुए। पुरस्कारवत उन्होंने अर्जुन को ''ब्रह्म शिरस'' नामक एक और दिव्यास्त्र का भी उपदेश दिया। उस अस्त्र के बारे में उन्होंने अर्जुन से कहा- ''हे अर्जुन! इस अस्त्र का बोध पहले अगस्त्य नामक महामुनि ने अग्निवेश मुनि को कराया था। उन्होंने कहा कि इसका सामान्यतः प्रयोग मत करना। आवश्यकता पड़ने पर ही तुम अपने मानव शत्रु पर प्रयोग करो।'' अर्जुन से उन्होंने एक और प्रतिज्ञ करा ली कि वह कभी उनसे युध्द नहीं करेगा।

हम से अधिक प्रेम है क्या?

द्रौपदी से विवाह संपन्न होने के बाद पांडवों का द्रुपद के पास सकल ऐश्वर्यों का अनुभव करना दुर्योधनादि के लिए दुःखकारक बन गया। वे पांडवों की अभ्युन्नति को सहन नहीं पाये। इसी दुर्भावना से उन्होंने पिता धृतराष्ट्र से कहकर द्रुपद और पांडवों को अलग

करने के उपायों पर सोच-विचार करने लगे। उस समय कर्ण ने दुर्योधन से कहा कि पांचालों को युध्द में पराजित करने के साथ साथ सारी समस्याएँ दूर होंगी। इस पर धृतराष्ट्र राजी न हुए, पर भीष्मादि से विचार करने की बात कही। उसके अनुसार सभा हुई। सभा में भीष्म ने दुर्योधन के विचार को ठीक न मानकर पांडव सहोदरों से स्नेह बढ़ाने की सलाह दी। द्रोणाचार्य ने भी भीष्म पितामह की बात सही कही। तब कर्ण ने कहा कि ''शत्रुओं से स्नहे निभाने की बात राजनीति के विरुध्द है।'' इसके उदाहरण के रूप में वितंतु नामक मगध राजाने किस प्रकार अपने ही मंत्री से दोखाकर राज्य खोया था, इस की बात कही। इस पर द्रोणाचार्य ने कहा कि कर्ण की बातों से कोई लाभ नहीं होनेवाला है। कर्ण हम लोगों से अधिक दुर्योधन से प्रेम रखनेवाला भी नहीं है। इसी संदर्भ में विदुर ने दोनों के विवाद को बढ़ने से रोका। तब धृतराष्ट्र ने पांडवों को हस्तिनापुर लाने का आदेश दिया। राज्य का विभाजन हुआ। द्यूत क्रीड़ा चली। पांडवों का अरण्यवास और अज्ञातवास संपन्न हुए। वे अज्ञातवास के अंतिम क्षण थे।

दुर्योधन की निंदा

उत्तर गोग्रहण से प्रेरित युध्द में गांड़ीव का घोष सुनकर द्रोणाचार्य ने ही कहा कि विराट के पक्ष से आनेवाला अजेय अर्जुन ही है। अतः सेना को ठीक ठीक संयोजित करना है। उस समय के अनेक अपशकुनों की ओर भी उन्होंने कौरवों का ध्यान दिलाया। उस पर दुर्योधन ने अकेले अर्जुन को अपने सामने नाचीज समझा था।

द्रोणाचार्य ने बार बार कहा कि अर्जुन का सामना करना आसान नहीं। तब दुर्योधन ने आचार्य को समझाया कि युध्द के समय शत्रु की प्रशंसा ठीक नहीं होता। वह आचार्य जैसों के लिए ऐसे समय पर नीति प्रवचन भी समुचित नहीं। अपने पर ही परुष वचनों के प्रयोग पर अश्वत्थामाने दुर्योधन की मूर्खता की निंदा भी की।

अर्जुन के नमस्कार बाण

कौरव सेना तैयार दिखी। मैदान में प्रवेश करनेवाले अर्जुन को देखकर पहले के कष्टों का स्मरण कर दुःख हुआ। आचार्य ने भी इसी प्रकार का अनुभव प्राप्त किया। किन्तु अर्जुन के तेज को देखकर उन्हें भीतर से आनंद भी होने लगा। अर्जुन ने सब से पहले बडों की ओर आदर व्यक्त किया। द्रोणाचार्य के पैरों के सामने दो नमस्कार बाणों का प्रयोग किया। वे द्रोण के पद कमलों के सामने ठहरे। अर्जुन की भक्ति प्रकट हुई, द्रोणाचार्य को अपरिमित आनंद। इस दृश्य को देखकर भीष्म, कृपाचार्य आदि सव्यसाची अर्जुन की भक्ति-प्रपत्तियों को सराहने लगे।

द्रोणार्जुन युध्द

युध्द के आरम्भ से पहले ही अर्जुन ने कुरु सेना में उपस्थित सभी बडों का परिचय विराट राजा के पुत्र उत्तर को दिया। साथ साथ यह भी कहा कि मैं द्रोणाचार्य से युध्द नहीं करूँगा। लेकिन रण भूमि में आचार्यों से युध्द टला नहीं। द्रोण और अर्जुन के बीच भी युध्द चला। द्रोणाचार्य अर्जुन की अस्त्र-विद्या पर सुख की अनुभूति

प्राप्त करते ही रहे। वे यही देखना चाहते थे। युध्द में कुंभसंभव द्रोणाचार्य के रथ और अश्वों को अर्जुन ने तोड़ा। उन्हें गुरु पुत्र अश्वत्थामा से भी भिड़ना पडा। वह युध्द समाप्त हुआ। लेकिन दुर्योधनादि के कदम बढे कुरुक्षेत्र युध्द की ओर।

कुरु-पांडव युध्द

महाभारत युध्द की तैयारी हुई। दुर्योधन ने गांगेय भीष्म की अनुमति से अपनी ग्यारह अक्षौहिणी सेना के अधिपतियों के रूप में द्रोणादि को नियुक्त किया। हर अक्षौहिणी सेना के एक अध्यक्ष थे। भीष्म सर्वसेनाध्यक्ष बनाये गये। इसी संदर्भ में भीष्म ने कौरव सेना में अपने पक्ष के नायकों की सामर्थ्य की ओर संकेत करते हुए द्रोणाचार्य को अतिरथी बताया। द्रोण दोनों पक्षों के राजकुमारों के गुरु हैं। व्यूह रचना प्रवीण और अनेक दिव्यास्त्रों से युक्त थे।

दूसरे ही दिन के युध्द में द्रौपदी के भाई धृष्टद्युम्न द्रोणाचार्य से युध्द के लिए तैयार हो गये। धृष्टद्युम्न पांडव सेनापति भी थे। दोनों के बीच भयंकर युध्द हुआ। भीम जब कलिंगराजा से भिड़े तो युधिष्ठिर धृष्टद्युम्न की सहायता में रहे। आठ दिनों पर्यन्त युध्द चलता रहा।

नौवें दिन को युध्द में द्रोण का अर्जुन के साथ मुकाबला रहा। इस में कृप,शल्य, बाह्लिक आदि भी अर्जुन से लडने आगे आये। दसवें दिन के युध्द में द्रोण ने अश्वत्थामा को भीष्म की सहायता के लिए रखा था।

सर्वसेनाधिपति गुरुद्रोणाचार्य

भीष्म दसवें दिन के युध्दोपरान्त शरतल्पशायी हो गये। कर्ण ने भी भीष्म के पास जाकर उनकी महानता की प्रशंसा की। उनकी स्थिति पर व्यथित हुआ। उनसे अनुमति लेकर ही युध्द मैदान में पहुँचा। भीष्म के बाद सर्वसेनाधिपति किसे बनाया जाय? प्रश्न था। तब कर्णने दुर्योधन के पास जाकर समझाया कि आपकी सेना में सेनाधिपति बनने योग्य बहुत हैं, पर जिनके आधिपत्य में किसी को भी विरोध नहीं होगा ऐसे व्यक्ति गुरु द्रोणाचार्य ही हैं। इस पर दुर्योधन की सहमति हुई। तुरन्त आचार्य द्रोण के पास जाकर उन्हें सर्वसेनापति के रूप में अभिषिक्त किया। कुंभसंभवने आनंद परवश होकर दुर्योधन से वर माँगने केलिए कहा। तब दुर्योधन ने धर्मसुत युधिष्ठिर को बाँधकर देने की प्रार्थना की।

फिर जंगल भेजूँगा

दुर्योधन की एकमात्र कामना है कि पांडवों को किसी न किसी तरह से पुनः जंगल में भेजने की। द्रोण ने दुर्योधन से पूछा कि ''क्या पांडवों को हराकर उन्हें आधा राज्य दोगे?'' इस पर दुर्योधन का स्पष्ट उत्तर था- ''नहीं, फिर धर्मराज युधिष्ठिर को जुए में हराकर अरण्यवास के लिए भेज दूँगा।'' दुर्योधन की भावना से द्रोणाचार्य को दुख हुआ। युधिष्ठिर को बाँध कर देने के बारे में द्रोण ने दुर्योधन से कहा कि यह तभी संभव होगा जब अर्जून युधिष्ठिर के साथ नहीं रहेगें अथवा युधिष्ठिर युध्द छोड भागते होंगे।

युधिष्ठर पकडे गये

द्रोणाचार्य के नेतृत्व में प्रथम दिन को शकटव्यूह रचा गया। इस के जवाब में पांडवों ने क्रौंचव्यूह की रचना की। युध्द निपुण द्रोणाचार्य ने पांडव सेना को बहुत हद नुकसान पहुँचायी। उधर समानांतर में युधिष्ठिर ने भी कुरुसेना के एक पक्ष को परास्त किया। द्रोण युधिष्ठिर को पकडने के प्रयत्न में लगे रहे। इतने में धर्मराज के पकडे जाने की खबर फैली। पांडव सेना में खलबली मची। सुनकर अर्जुन भाई की रक्षा के लिए दौड़ आये। गुरु द्रोण का सामना किया। कौरव सेना तितर-बितर हो गयी।

किसी भी तरह से मैं युधिष्ठिर को पकडूँगा

दूसरे दिवस को द्रोण ने अर्जुन को युधिष्ठिर से दूर रखने की सलाह दुर्योधन को दी। इस दिशा में दुर्योधन ने अर्जुन को दूर ले जाने का भार संशप्तकों पर छोड़ा। वे तैयार हो गये। लेकिन अर्जुन ने युधिष्ठिर की रक्षा की पूर्ण व्यवस्था करके ही संशप्तकों से युध्द के लिए चले। दूसरे दिन पर कौरवों का गरुड़ व्यूह था तो पांडवों का मंडलार्ध्द व्यूह। युध्द घमासान चला। दुर्योधन को लगा कि पांडव हार ही रहे हैं। भगदत्त हाथी पर सवार हो पांडवों पर प्रहार कर रहा था। उसी समय अर्जुन संशप्तकों को हराकर युधिष्ठिर के पास पहुँच ही गये। भगदत्त का संहार कर कौरव सेना को भयकंपित कर दिया। तब जाकर पांडव सेना ने सुख की सांस ली। द्रोण की प्रतिज्ञा पूरी नहीं हुई। उस दिन का युध्द रुका। दुर्योधन ने दिये गये वह की याद दिलायी। द्रोण ने आश्वासन दिया कि अवश्य युधिष्ठिर को पकडने का प्रयास जारी रहेगा।

द्रोण की पद्मव्यूह रचना

तीसरे दिन के युध्द के लिए आचार्य द्रोण ने पद्मव्यूह की रचना की। पद्मव्यूह छेदन प्रक्रिया अर्जुन को छोड और किसी को मालूम नहीं थी। अर्जुन पुत्र अभिमन्यु मात्र प्रवेश जानता है। वापस लौटना नहीं जानता। अर्जुन के दूर रहने की स्थिति में अन्य पांडवों ने अभिमन्यु को पद्मव्यूह में प्रवेश करने के लिए प्रोत्साहित किया। वह अगर मार्ग बनायेगा तो तब सब मिलकर व्यूह प्रवेश करेंगे। योजना अर्जुनेतर पांडवों की थी।

सैंधव का संहार करूँगा

अभिमन्यु व्यूह भेदन रहस्य जानने के कारण प्रवेश तो कर गया। लेकिन पांडवों को व्यूह के प्रवेश पर ही सैंधव ने रोका। सैंधव को अर्जुन रहित पांडवों को एक दिन रोक पाने का वर मिला था। अभिमन्यु लड़ लड़ कर हार गया। द्रोण की सूचना के अनुसार कर्ण ने अभिमन्यु का धनुष तोड़ा। महारथी सब एक जुट होकर अभिमन्यु पर टूटे। उसको घेरा। तब जाकर अभिमन्यु अकेले लडते हुए दुश्शासन के पुत्र से भिडा। लडते-लड़ते वीर गति प्राप्त की। समाचार पाकर अर्जुन को बेहद दुःख हुआ। अपने पुत्र अभिमन्यु की मृत्यु के कारक सैंधव को दुसरे दिन सूर्यास्त के समय तक मारने की प्रतिज्ञा की। नहीं तो वे स्वयं आत्माहुति कर लेंगे। कर्ण आदि कौरव नेता सैंधव में धैर्य बाँधने का प्रयास तो किया।

चक्रव्यूह में सैंधव

चतुर्थ दिवस को द्रोण धवल कवच धारण करते हैं। उसके लिए उपयुक्त उष्णीषा को भी लेकर महोग्र हो युध्द के लिए तैयार हुए।

उस दिन को उन्होंने चक्रव्यूह रचना की। व्यूह में गर्भव्यूह के रूप में पद्मव्यूह रचकर भूरिश्रवा, अश्वत्थामा आदि द्वारा सैंधव की रक्षा की योजना बनायी।

प्रदक्षिणा लेकर व्यूह में प्रवेश

अर्जुन युधिष्ठिर की रक्षा का दायित्व सात्यकी को सौंपा। युध्दोन्मुख हुए। तब द्रोणाचार्य ने अर्जुन को रोक कर कहा कि ''मुझ पर विजय प्राप्त किये बिना तुम आगे कैसे निकल सकते हो?'' इस में निहित सूक्ष्म अर्थ को समझकर श्रीकृष्ण ने अर्जुन को आदेश कहा- ''हे अर्जुन! इन से युध्द करना दिन को व्यर्थ करना ही होगा। बस, इन की प्रदक्षिणा लेकर व्यूह में घुसना ही अब तुम्हारा एक मात्र सूत्र होना चाहिए।'' अर्जुन ने श्रीकृष्ण की बात मानी। कौरव सेना पर शर वर्षा करते हुए आगे बढ़ चले।

सूर्य को सुदर्शन चक्र

अकेले ही आगे बढ़नेवाले अर्जुन के बारे में युधिष्ठिर सोच में पडे। उनकी सहायता के लिए सात्यकी को भेजा और कुछ ही समय बाद भीम को भी। सब मिलकर सिन्धु राजा सैंधव की ओर बढ़ने लगे। उन पांडव वीरों को रोकने के लिए दुर्योधन स्वयं उनकी ओर बढ़े। सात्यकी को मारने जब भूरिश्रव आगे बढ़ा तो श्रीकृष्ण के संकेत से अर्जुन ने भूरिश्रव के हाथ खण्डित कर दिये। सात्यकी ने भूरिश्रव का ही संहार कर दिया। तब तक बहुत समय बीत चुका था। सैंधव मारा नहीं गया। उन तक पहुँचनेवाले पांडवों को भर सक रोका जा रहा था। श्रीकृष्ण को तब एक उपाय सूझा। अपने सुदर्शन चक्र को

याद किया। उसने जाकर सूर्य को घेरा और अंधकार छा गया। संकेत मात्र से हर्षातिरेक से बाहर निकले सैंधव का सिर अर्जुन से काटा गया! चक्र हटा! फिर प्रकाश!

सायं संध्या में युध्द

उस दिन को संध्या समय होने पर भी दोनों पक्षों ने युध्द रोका नहीं। मशालों की कांति में युध्द चला। अर्जुन ने थके हुए सैनिकों की ओर देखा। युध्द विराम की घोषणा करायी। रात में युध्द नियमों के अनुसार नहीं होता है। परन्तु उस रात की विशेषता एक है। रात के युध्द में राक्षस निपुण होते हैं। अपरिमित बल से वे माया युध्द करते हैं। उस दिन रात को युध्द में भीम पुत्र घटोत्कच ने भाग लिया। अर्जुन के लिए अपने पास सुरक्षित रखे अस्त्र ''शक्ति'' को कर्ण द्वारा प्रयोग कराना ही था। कर्ण ने विवश होकर घटोत्कच पर ''शक्ति'' का प्रयोग किया। घटोत्कच का संहार हुआ। लेकिन अर्जुन ''शक्ति'' के प्रहार से बचे। वह अमोघ अस्त्र था। यह सब श्रीकृष्ण की ही योजना थी।

अश्वत्थामा हतः कुंजरः

पांचवें दिन के युध्द में द्रोणाचार्य के प्रभाव के सामने पांडवों का बल निर्वीर्य होने लगा था। द्रोण ने अनेक वीरों का संहार किया। द्रुपद उनके अस्त्रों से ही मारा गया। आचार्य के सामने कोई पहुँच नहीं पा रहा था। उन पर विजय पाने के लिए कुछ मार्ग का अन्वेषण करना ही था। यह मायोपाय से ही संभव होगा। श्रीकृष्ण की सलाह

से धर्मराज युधिष्ठिर ने द्रोणाचार्य के पुत्र अश्वत्थामा की मृत्यु की घोषणा की। पहले तो धर्मतनय ने अस्वीकार किया। जब अश्वत्थामा नामक एक हाथी मरा तो युधिष्ठिर से कहलवाया गया- ''अश्वत्थामा हतः, कुंजरः''। आरंभिक शब्द जोर से कहे गये और अन्तिम शब्द

धीमी स्वर में। बात धर्मराज के मुँह से सुनकर द्रोणाचार्य ने पुत्र की मृत्यु के समाचार को सत्य समझा। दुःखित हुए। अस्त्र सन्यास किया। कर्ण, कृप, सुयोधनादि को बुलाकर अच्छी समझ से युध्द करने की सलाह दी तथा स्वयं रथ पर योग निष्ठा में बैठे। उस समय अर्जुनादि के रोकने पर भी धृष्टद्युम्न ने द्रोणाचार्य का वध किया। इस पर अश्वत्थामा नाराज हुए। नारायणास्त्र का प्रयोग पांडवों पर किया। फिर श्रीकृष्ण ने सहायता की। सब ने अपने अपने अस्त्र छोडे। नारायणास्त्र को झुककर प्राणाम किया। अस्त्र शान्त हो गया। पांडव बच गये।

द्रोणाचार्य का व्यक्तित्व

महाभारत के समस्त ख्यात वीरों में द्रोणाचार्य अपना प्रमुख स्थान रखते हैं। उन्होंने सकल शास्त्र प्रवीण हो कर भीष्मादि की प्रशंसा पायी। अपने शिष्य को सारी विद्याएँ दी। ब्राह्मण होने पर भी ''इदं ब्रह्ममिदं क्षात्रं'' उक्ति को सार्थकता दी द्रोणाचार्य ने। आप महाभारत में भीष्म के समान अजेय ही रहे हैं।

* * *